मौलाना अब्बुलकलाम आज़ाद

का

* जीवन-चरित्र *





लेखक.—

रमेशचन्द्र आर्य



प्रथम संस्करण } शिवरात्रि १९९६ { मूल्य ।=)

प्रकाशक —
विजय पुस्तक भंडार,
श्रद्धानन्द बाजार,
देहली।



मुद्रक—
'अर्जुन' प्रिंटिंग प्रेस,
श्रद्धानन्द बाजार,
देहली।

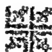
समर्पण

राष्ट्र के चरणों में

--रमेशचन्द्र आर्य

विषय-सूचि

—— 0 ——



मौलाना अबुलकलाम आज़ाद



मौलाना अब्बुलकलाम आज़ाद—

लोग कहते हैं, मुसलमानों में राष्ट्रीयता नहीं। वे हिंदुस्तान में जन्म ले कर दिन रात अरब के गीत गाते हैं। धर्मान्धता उनमें कूट-कूट कर भरी है। मज़हब और कुरान के आगे देशभक्ति को वे नितान्त नगण्य वस्तु समझते हैं। —लेकिन एक व्यक्ति है, जिसे ठीक इसका अपवाद कह सकते हैं। उस की राष्ट्रीयता दूध की तरह स्वच्छ है। वह अरब में पैदा हो कर भी भारत के लिये सर्वस्व निछावर कर रहा है। उसकी आस्तिकता में किसी को सन्देह नहीं। वह इस्लाम और कुरान का पक्का मुरीद; फिर भी देश-भक्ति में वह किसी से कम नहीं है।

वह अपने मार्ग पर दृढ़, चट्टान की तरह दृढ़ है। साम्प्रदायिक हवा के झोंके उसे पथ-भ्रष्ट नहीं कर सके। वह आगे बढ़ा और एक-रस होकर बढ़ ही रहा है। उनकी इसी अनन्य निष्ठा ने उसे लोगों का प्यारा बना दिया है। वह आज देश भर की आशाओं का केन्द्र है और उसका नाम है—

मौलाना अब्बुलकलाम आज़ाद।

[१]

वंश-परिचय

मौलाना अब्बुलकलाम आज़ाद का असली नाम अब्बुल-कलाम फिरोज़बख्त अहमद मुहीउद्दीन है। आपके कुल में तीन विभिन्न परिवारों का सामञ्जस्य है, जो हिन्दुस्तान व अरब के उच्च, श्रेष्ठ तथा प्रतिष्ठित घरों में से हैं। आपकी माता मदीना के मुफ्ती शेख मोहम्मद बिन ज़ाहिर वातरी की भान्जी तथा अत्यन्त समझदार महिला थीं। बालक अब्बुलकलाम पर अपनी माता के गुणों का काफी प्रभाव पड़ा और यही कारण है कि अब तक मौलाना अरब की सभ्यता और संस्कृति के कायल हैं।

आपके पिता मौ० मुहम्मद खैरुलउद्दीन साहब सन् १८५७ के स्वातंत्र्य-युद्ध के बाद हिंदुस्तान से विदा हो कर में चले गये थे। वहां वे मिस्र, टर्की, ईराक और हज शरीफ आदि देशों में भ्रमण करते रहे। फिर बम्बई आ गये और वहां कुछ दिन रह कर कलकत्ता चले गये तथा वहीं बस गये। मौ० खैरुलउद्दीन अपने समय के बहुत बड़े विद्वानों में गिने जाते थे। उन्होंने इस्लाम पर, अरबी में अनेक पुस्तकें लिखी थीं, जो मिस्र में छप कर प्रकाशित हुईं। उनके शिष्यों की संख्या पर्याप्त थी और वे हिंदुस्तान में कलकत्ता, बम्बई, कच्छ, काठियावाड़ तथा गुजरात के अलावा विदेशों में मिस्र, श्याम, ईराक, जावा और लंका तक में आबाद थे। उनका देहान्त सन् १९०८ में हुआ था।

उनके नाना मौलाना मुहम्मद मुनव्वरुद्दीन मुगल साम्राज्य के अन्तिम प्रसिद्ध विद्वान् शिक्षकों में से थे। उनके शिष्य वर्ग में ऐसे ऐसे व्यक्ति हुए हैं, जिनकी गणना तत्कालीन बड़े आदमियों में की जाती थी। नाना के पिता मौ० रशीदुद्दीन लाहौर के काजी तथा अहमदशाह अब्दाली की ओर से नियुक्त पंजाब के सूबेदार के सलाहकार थे। आपके दादा मौ० मुहम्मद हादी दिल्ली के ही एक प्रतिष्ठित परिवार से सम्बन्ध रखते थे। कहते हैं, इस परिवार में, एक ही समय में, पांच-पांच ख्याति-प्राप्त उल्मा (विद्वान) उत्पन्न हुए हैं। इस प्रकार आपका वंश भारतवर्ष के मुसलमान उल्माओं के खानदान में प्रमुख एवं पुराना है।

आपके पिता जब विदेशों में थे, तभी हिजरी सन् १३०५ अर्थात् सन् १८८८ ई० में आपका जन्म, अरब के प्रसिद्ध मुस्लिम तीर्थ स्थान मदीना में हुआ था। आपकी एक बहिन भी थीं, जिनका नाम आयरू बेगम था। वह भी पढ़ी लिखी शिक्षित महिला थीं तथा रियासत भोपाल में किसी पद पर आसीन थीं। आपके कोई भाई नहीं था।



आपके पिता मौ० मुहम्मद खैरुलउद्दीन साहब सन् १८५७ के स्वातन्त्र्य-युद्ध के बाद हिन्दुस्तान से विदा हो कर विदेशों में चले गये थे। वहां वे मिस्र, टर्की, ईराक और हज़ शरीफ आदि देशों में भ्रमण करते रहे। फिर बम्बई आ गये और वहां कुछ दिन रह कर कलकत्ता चले गये तथा वहीं बस गये। मौ० खैरुलउद्दीन अपने समय के बहुत बड़े विद्वानों में गिने जाते थे। उन्होंने इस्लाम पर, अरबी में अनेक पुस्तकें लिखी थीं, जो मिस्र में छप कर प्रकाशित हुई। उनके शिष्यों की संख्या पर्याप्त थी और वे हिन्दुस्तान में कलकत्ता, बम्बई, कच्छ, काठियावाड़ तथा गुजरात के अलावा विदेशों में मिस्र, श्याम, ईराक, जावा और लंका तक में आबाद थे। उनका देहान्त सन १९०८ में हुआ था।

उनके नाना मौलाना मुहम्मद मुनव्वरुद्दीन मुगल साम्राज्य के अन्तिम प्रसिद्ध विद्वान् शिक्षकों में से थे। उनके शिष्य वर्ग में ऐसे ऐसे व्यक्ति हुए हैं, जिनकी गणना तत्कालीन बड़े आदमियों में की जाती थी। नाना के पिता मौ० रशीदुद्दीन लाहौर के काज़ी तथा अहमदशाह अब्दाली की ओर से नियुक्त पंजाब के सूबेदार के सलाहकार थे। आपके दादा मौ० मुहम्मद हादी दिल्ली के [illegible] एक प्रतिष्ठित परिवार से सम्बन्ध रखते थे। कहते हैं, इस परिवार में, एक ही समय में, पांच पांच ख्याति-प्राप्त उल्मा (विद्वान) उत्पन्न हुए हैं। इस प्रकार आपका वंश भारतवर्ष के मुसलमान उल्माओं के खानदान में प्रमुख एवं पुराना है।

आपके पिता जब विदेशों में थे, तभी हिजरी सन् १३०५ अर्थात् सन् १८८८ ई० में आपका जन्म, अरब के प्रसिद्ध मुस्लिम तीर्थ स्थान मदीना में हुआ था। आपकी एक बहिन भी थीं, जिनका नाम आबरू बेगम था। वह भी पढ़ी लिखी शिक्षित महिला थीं तथा रियासत भोपाल में किसी पद पर मनानिम थीं। आपके कोई भाई नहीं था।



[२]

बाल्यकाल

'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' वाली लोकोक्ति हमारे चरित्र नायक पर एक दम ठीक बैठती है। बालक अब्दुल-कलाम की कुशाग्र बुद्धि का परिचय बचपन में ही मिल गया था। वह जब ४-५ वर्ष का था, तभी से अपने आसपास की वस्तु का ज्ञान प्राप्त करने की लगन उसमें थी। पिताजी ने जब यह देखा तो यथासमय उसको शिक्षा दिलाने का प्रबंध कर दिया। लेकिन चूंकि आपका खान्दान पुराने ढर्रे का था इसलिए पुराने तरीकों पर ही आपकी शिक्षा का प्रारम्भ हुआ और पहले-पहल आपको धार्मिक शिक्षा दी गई।

यद्यपि लार्ड मैकाले की शिक्षा प्रणाली का उन दिनों प्रादुर्भाव हो चुका था और तात्कालिक स्कूलों व कालिजों की ओर भारतीय जनता काफ़ी आकृष्ट हो चुकी थी, फिर भी मुसलमान लोग उन संस्थाओं को, जिनमें कि अंग्रेज़ी आदि की शिक्षा दी जाती थी, सन्देह की दृष्टि से देखते थे। एक यह भी कारण था कि पहले आपको किसी स्कूल में दाखिल न करा कर मौलवी के पास ही पढ़ने को भेजा गया।

बालक अबुलकलाम की बुद्धि तो प्रखर थी ही; जो कुछ मौलवी साहब पढ़ाते, वह फ़ौरन उसको याद कर लेता। थोड़े ही दिनों में उसने उर्दू, फ़ारसी और अरबी का [illegible] ज्ञान प्राप्त कर लिया। मौलवी साहब विद्यार्थी की प्रतिभा देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और उसे खूब दिल लगाकर पढ़ाने लगे। अब अबुलकलाम ने इस्लामी साहित्य का भी अध्ययन करना शुरू किया और थोड़े समय में ही इस विषय की पुस्तकें भी उसने पढ़ लीं। ख़ुदापरस्त (आस्तिक) बालक को कुरान के बार बार पढ़ने में अतिशय आनन्द प्राप्त होता था। वह उसके वास्तविक अर्थों को समझने की चेष्टा करता। यदि कहीं समझ में न आता तो मौलवी को [illegible] करने को कहता और, जब तक उसके अर्थों को पूर्ण तरह से समझ न लेता, तब तक उसे न छोड़ता।

आपका बचपन अधिकतर अध्ययन में ही [illegible]

और टर्की में घूमे, वहाँ के उलमाओं की संगति में रहकर विशेष शिक्षा प्राप्त करने साथ साथ में ही नई दुनिया की नई रोशनी देखने का भी अवसर प्राप्त हो गया था। यहीं से आपके विचारों में भी परिवर्तन का सूत्रपात हुआ। आपने अनुभव किया कि पुरानी शिक्षा और पुराने साहित्य की दुनिया का दायरा बहुत तंग है तथा नई शिक्षा और नये साहित्य ने एक नई हलचल पैदा कर दी है। अब आप यूरोप के विज्ञान और साहित्य की ओर झुक पड़े और उसको पढ़ने की आप में तीव्र इच्छा पैदा हो गई। लेकिन समाज की परिपाटी, परिवार की परम्परा एवं शिक्षा की रूढ़ि के बन्धन सामने आ खड़े हुए और बालक अब्दुलकलाम को अपनी इच्छा-पूर्ति करना सम्भव न जान पड़ा। कहते हैं, मौ० शिबली जैसे विद्वानों से बल प्राप्त हुआ और आपका मार्ग प्रशस्त ही हो गया। फिर आपने थोड़े समय में ही अंग्रेज़ी का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया।



[२]

कार्य-क्षेत्र में

आपको अपने विद्यार्थी जीवन में ही लिखने पढ़ने का शौक हो गया था। अत छोटी उम्र में ही सुन्दर और सार्थक लेख आप लिखने लग गये थे। लाहौर के 'पैसा', लखनऊ के 'आनन्दी' और अमृतसर के 'वकील' अखबार में आपकी रचनायें प्रकाशित होतीं और लोग उन्हें चाव से पढ़ा करते थे। धीरे धीरे आपकी ख्याति बढ़ने लगी और १५ वर्ष की आयु में तो आपने कलकत्ता से एक मासिक-पत्र निकालना भी शुरू कर दिया। सन् १९०८ में आप 'वकील' अखबार के सम्पादक बन कर अमृतसर आगये और जीविकोपार्जन के साथ साथ उर्दू साहित्य की सेवा में लग गये।

इन्हीं दिनों आप सार्वजनिक मामलों में दिलचस्पी लें लग गये और सन् १६०८ में आपके राजनैतिक विचारों में भ परिवर्तन हो गया। यह समय ऐसा था, जब भारतवर्ष के मुस लमान यहां की राजनीति से बिल्कुल अलग से थे; क्योंकि स सैयद अहमदखां जैसे व्यक्तियों ने उनके अन्दर यह विचा कूट कूट कर भर दिये थे कि इस देश में बहुमत हिन्दुओं है। अतः हिन्दुस्तान की हुकूमत हिन्दुस्तानियों के हाथ में आ का अभिप्राय यह होगा कि यहां हिन्दुओं का राज्य स्थापि हो जायगा। यही नहीं, उन्हें यह भी पाठ पढ़ाया गया कि मु सलमानों की भलाई इसी में है कि वे किसी भी राष्ट्रीय आन्दो- लन में भाग न लें और एकदम सरकार-परस्त बने रहें। यही कारण था कि उस समय मुसलमान कांग्रेस के किसी भी कार्य में हिस्सा नहीं लेते थे। मुस्लिम लीग भी इसी उद्देश्य से स्था- पित हो चुकी थी। सन् १६०८ में लीग के दिल्ली-अधिवेशन में सैयद अमीरअली का यह सन्देश सुनाया गया था कि "मुसल- मानों के राजनैतिक आन्दोलन का ध्येय, हिन्दुओं से अधिकार प्राप्त करना होना चाहिये, न कि ब्रिटिश सरकार से। उनका मुकाबिला हिन्दुओं के साथ है, सरकार के साथ नहीं।"

आपको मुसलमानों का यह रुख पसन्द नहीं आया। देश की उन्नति के लिये आप इसे घातक समझने लगे और अपने यौवनोचित उत्साह के साथ उसे बदलने के लिये कटिबद्ध भी हो गये। आपने अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये सन् १६१२ में कलकत्ता से 'अलहिलाल' नामक एक साप्ताहिक-पत्र निकाला

और मुसलमानों की देश-द्रोही भावना के विरुद्ध एकदम विद्रोह खड़ा कर दिया। आपने पूरे जोरों के साथ यह आन्दोलन शुरू कर दिया कि मुसलमानों का हित हिन्दुओं के साथ एकता करने में है। उनको कांग्रेस में शामिल होना चाहिये और हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता को ही अपना मुख्य आदर्श बनाना चाहिए। आपकी भाषा मजी हुई और शैली आकर्षक थी। इस लिए थोड़े ही समय में यह पत्र उर्दू के प्रमुख पत्रों में गिना जाने लगा और उसने उर्दू की पत्र-कला को भी एकाएक चमका दिया। सारे देश के मुसलमान आपकी तरफ आकृष्ट हो गये।

मुस्लिम लीगी तथा अलीगढ़ की मुस्लिम-यूनिवर्सिटी-पार्टी वालों को आपकी यह लोकप्रियता अच्छी न लगी और उन्होंने आपका भरपूर विरोध किया। आपको कत्ल कर दिये जाने तक की धमकियाँ दी गई; किन्तु आप अपने पथ से विचलित न हुए और निरन्तर अपने कर्त्तव्य पर दृढ़ रहते हुए आगे ही आगे बढ़ते चले गये। फल यह हुआ कि समझदार मुसलमानों के दिमाग बदल गये। उनमें राजनैतिक आन्दोलन की नई लहरें पैदा हुई और वे बिजली की तरह चारों ओर फैल गई। मुस्लिम लीग को भी अपनी नियमावली बदलनी पड़ी और अब उसने हिन्दुस्तान के लिये स्वायत्त शासन प्राप्त करना अपना ध्येय बनाया।

सन् १९१४ में यूरोप का महायुद्ध शुरू हो गया। आपने 'अलहिलाल' में पूरी स्वतन्त्रता के साथ अपने विचार प्रकट करना शुरू कर दिया। सरकार को भला, यह क्यों पसन्द आने

लगे। यह खोजी और पत्र के लेखों की जाँच पड़ताल के लिए एक विशेष ब्यूरो नियुक्त किया। लेकिन आपकी नीति और विचारधारा पर इसका कुछ भी असर नहीं पड़ा और आप निर्भीकता के साथ टीका टिप्पणी करते ही रहे। इलाहाबाद का सरकारी पत्र 'पायोनियर' आप पर बुरी तरह चौकन्ना पड़ा और अपने एक अग्र लेख द्वारा सरकार का ध्यान 'अलहिलाल' की ओर आकर्षित किया। हाउस आफ कामन्स तक में इस विषय में प्रश्नोत्तर हुए। परिणामतः पत्र की जमानत ज़ब्त कर ली गई और दस हजार रु० की नई जमानत दाखिल करने का हुक्म दिया। आपने इस पर पत्र का प्रकाशन ही बन्द कर दिया।

'अलहिलाल' की लोकप्रियता अब इतनी हो चुकी थी कि वह जनता का अपना प्यारा पत्र बन गया था। सैकड़ों-हजारों व्यक्तियों के जीवन निर्माण में उसका हाथ था। मौ० शौकतअली तक ने उन दिनों यह कहा था कि "'अलहिलाल' ने हम आज़ादों का सच्चा रास्ता दिखाया है।"

इसी दौरान में, कलकत्ते के एक प्रतिष्ठित खानदान की कन्या से आपकी शादी भी हो गई थी। आपके साले आजकल भोपाल स्टेट में रहते हैं।



नज़रबन्द

स्वतन्त्रता के उपासक को चैन कहाँ? मौलाना आज़ाद चुप बैठने वाले थोड़े ही थे। आपने 'अलबलाग' नाम से दूसरा पत्र निकालना शुरू कर दिया। इस पर सरकार चिढ़ गई और दूसरा कोई उपाय न देख कर आप पर 'भारत रक्षा कानून' की धारा ३ का वार कर दिया। संयुक्त प्रान्त, दिल्ली, पंजाब, मध्यप्रान्त और बम्बई आदि प्रान्तों में आप का जाना आना रोक दिया गया। केवल बंगाल और बिहार में आप पर पाबन्दी न थी। २३ मार्च सन् १९१६ को बंगाल सरकार ने भी एक सप्ताह का नोटिस दे कर आप को बंगाल छोड़ देने का हुक्म दे दिया। फलस्वरूप आप ३० मार्च को रांची आ गये।

चार महीना बाद भारत सरकार ने आपको वहां नजरबन्द कर दिया और आप शहर के बाहर मोराबादी नामक गांव के एकान्त स्थान में रहने लग गये। यहीं पर आपने नज़रबन्दी के जमाने में 'तज़करा' नामक अपनी प्रसिद्ध पुस्तक की रचना की। यह ग्रन्थ उर्दू-साहित्य की एक अमूल्य निधि समझा जाता है। आपने इसमें अपने खान्दान का विस्तृत और अपना संक्षिप्त-सा परिचय साहित्यिक भाषा में अंकित किया है।

नजरबन्दी की खबर से जनता में हलचल मच गई और आप पर से पाबन्दी हटाने के लिए आन्दोलन भी किया गया। लगभग ६० हजार प्रमुख व्यक्तियों के हस्ताक्षरों से, लार्ड चारमाइकेल के दरबार में एक दरख्वास्त आपकी मुक्ति के लिए दी गई थी; किन्तु फल कुछ नहीं निकला। श्री मजहरुलहक ने कौंसिल में जब आपके नज़रबन्द किये जाने का कारण पूछा, तब सरकार की ओर से उत्तर देते हुए यह कहा गया कि बंगाल की क्रांतिकारी संस्थाओं से आपका सम्बन्ध है। नज़रबन्दी की हालत में भी आपका पैदा किया हुआ आन्दोलन शान्त नहीं हुआ और वह मुसलमानों में दृढ़ता के साथ फैलता चला गया। सन् १६१८ के आते आते मुसलमानों की एक बड़ी संख्या कांग्रेस में शामिल हो गई और मुस्लिम लीग के प्लेटफार्म पर से भी देश भक्ति की बातें होने लगीं।

आपने इसी बीच रांची में एक मस्जिद का भी निर्माण कराया था। चार वर्ष तक आप वहां नज़रबन्द रहे और जनवरी सन १६२० में रिहा कर दिये गये। इसके बाद असहयोग

न्दोलन शुरू हुआ। आपने उसमें गांधी जी का पूरी तरह
साथ दिया। एक तरह से तो आप असहयोग आन्दोलन के
न्मदाताओं में से ही हैं, क्योंकि २२ मार्च सन् १९२० को,
देहली में इसके कार्यक्रम पर विचार करने के लिए, केवल ४
ताओं का जो पहला सम्मेलन हुआ था, उसमें गांधी जी, ला०
ाजपतराय, हकीम अजमलखां के अलावा चौथे आप ही थे।
न १९२१ के अन्त में, युवराज के स्वागत के बहिष्कार को
सफल बनाने के लिए, बंगाल सरकार ने दमन का श्रीगणेश
किया था। उस समय स्वयंसेवक-दल और कांग्रेस-कमेटियां
ैर-कानूनी घोषित करदी गई थीं। तभी १० दिसम्बर को कल-
कत्ता में स्वर्गीय देशबन्धुदास के साथ आप भी गिरफ्तार कर
लिये गये और एक वर्ष की सज़ा मिल गई।



[५]

कांग्रेस के प्रधान

जनवरी सन् १९२३ में जब आप जेल से बाहर आ
तब कांग्रेस में परिवर्त्तनवादी और अपरिवर्त्तनवादी दो द
बन चुके थे। एक दल कौंसिल-प्रवेश का पक्षपाती था, जिस
नेता श्री देशबन्धुदास और पं० मोतीलाल नेहरू थे तथा दूस
दल इसका विरोधी था और उसके नेता थे श्री राजगोपालाचा
डा० राजेन्द्रप्रसाद तथा सरदार वल्लभभाई पटेल। दोनों द
में खूब कशमकश हुई, लेकिन आप समझौता कराने का प्र
करते रहे। भगवान की दया से, आप उसमें सफल हो ग
और मार्च १९२३ में, इलाहाबाद में अ० भा० कांग्रेस कमेटी
बैठक में आपका समझौता मान लिया गया।

इसी बीच पंजाब में मुलतान तथा मलाबार आदि स्थानों में हिन्दू मुस्लिम दंगे हो गये, जिनमें हिन्दुओं के धन जन की अपार क्षति हुई। उस समय पंजाब का सारा ही वातावरण विक्षुब्ध हो उठा था। अतः वहां की वस्तुस्थिति की जांच के लिये एक कमेटी का निर्माण किया गया, जिसमें श्री देशबन्धु दास और हकीम अजमलखां के साथ आप भी एक सदस्य थे। अप्रैल में यह कमेटी पंजाब गई और वहां अच्छी तरह परिस्थिति का अध्ययन किया। आपने अपनी राय प्रकट करते हुए पंजाब की अव्यवस्था का असली कारण मलाबार और मुल्तान की घटनायें तथा शुद्धि-संगठन की प्रवृत्ति को बतलाया था। आपने उन्हीं दिनों शुद्धि के सम्बन्ध में एक घोषणा-पत्र भी प्रकाशित किया था, जिसमें हिन्दुओं के धर्म प्रचार का अधिकार आपको स्वीकार करना पड़ा था। आप हिन्दू मुसलमानों में सद्भाव बनाये रखने का भी प्रयत्न करते रहे और जून सन् १९२३ के अन्तिम सप्ताह में आपने, अमृतसर में होने वाली सेण्ट्रल सिख लीग के मंत्री के नाम निम्न संदेश भेजा था :—

"प्यारे भाई! अमृतसर में होने वाली सिख लीग में सम्मिलित होने के निमंत्रण के लिये धन्यवाद। खेद है कि दुर्बल होने के कारण मैं सम्मिलित तो न हो सकूंगा, फिर भी आपके शुभ उद्देश्यों के साथ मुझे पूर्ण सहानुभूति है। सिख जाति को मेरा यह संदेश पहुंचा दें कि हिन्दू मुस्लिम एकता अपने वास्तविक रूप में हो तथा आपस में लड़ने वाली दोनों जातियों को आप मिला दें। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि

शुद्ध विचार रखने वाली आपकी जाति, एक बार भी
करले तो इस पवित्र कार्य में सफलता हो सकती है।
सन्देह नहीं कि आज सारे भारतवर्ष की आँखें आपकी
लगी हुई हैं। आप युद्ध के बाग के मैदाने जंग में नौकरशाही को
पराजित कर चुके हैं, अब आपका कर्तव्य है कि
अपने दोनों भाइयों—हिन्दू और मुसलमानों—के वैमनस्य क
पराजित करें। जो पवित्र कार्य आपने आरम्भ किया है, उ
की सफलता चाहता हूँ।"

अगस्त के प्रथम सप्ताह में मद्रास में कांग्रेस कार्य
समिति की एक आवश्यक बैठक हुई और उसमें देश की दश
का ध्यान रख कर दिल्ली में कांग्रेस का एक विशेषाधिवेश
करने का निश्चय किया गया। आपकी देशभक्ति, त्याग औ
योग्यता के कारण देश को यह पूर्ण विश्वास था कि कांग्रेस
टूटे हुए शरीर को जोड़ कर सम्पूर्ण कर देने में आपकी द
अवश्य कारगर होगी। अतः आप ही को विशेषाधिवेशन
प्रधान निर्वाचित किया गया। १५ सितम्बर से यह अधिवेश
शुरू होने वाला था। आप १३ ता० की सुबह दिल्ली पधारे
राजधानी में आपका शानदार स्वागत हुआ और शाम को स्वा
श्रद्धानन्द जी के सभापतित्व में हिन्दू मुसलमानों की ओर
आपका अभिनन्दन किया गया। आपने अपने संक्षिप्त कि
सुन्दर भाषण में इसका यथोचित उत्तर भी दिया था।

१५ ता० को निश्चित समय पर विशेषाधिवेशन
कार्य आरम्भ हुआ। स्वागताध्यक्ष के अतिथि-सत्कार के

आपने अपना सभापति-भाषण दिया, जिसमें देश विदेश की राजनैतिक समस्याओं पर विचार करने के अनन्तर भारत की धार्मिक और सामाजिक उलझनों को सुलझाने के लिये जनता से मर्मस्पर्शी शब्दों में अपील की गई थी। इस भाषण के कुछ अंश परिशिष्ट रूप में पीछे दिये जारहे हैं।

१६ सितम्बर को कांग्रेस के खुले इजलास में कौन्सिल-प्रवेश का प्रस्ताव रखा गया। खूब बहस हुई। स्वराज्य दल के नेता और अपरिवर्तनवादी आपस में भिड़ गये, लेकिन यह आपके ही व्यक्तित्व और प्रयत्न का परिणाम था कि नेताओं में आपस में कटुता न बढ़ी और एक प्रस्ताव पास होकर कांग्रेस में फैली हुई फूट मिट गई। पश्चात् दोनों दलों ने अपने-अपने विचार, विश्वास और तरीकों से कांग्रेस का कार्य शुरू कर दिया। कांग्रेस में पास हुआ प्रस्ताव इस प्रकार था—

"यह कांग्रेस अहिंसात्मक असहयोग के सिद्धांत में अपने विश्वास को फिर से दृढ़ करती हुई घोषणा करती है कि कांग्रेस के वे सभ्य, जिन्हें धारा-सभाओं में प्रवेश करने में किसी तरह का धार्मिक या आन्तरिक संकोच नहीं है, वे आने वाले निर्वाचनों में उम्मेदवार बनकर खड़े हो सकते हैं और अपने सम्मति देने के अधिकार का प्रयोग कर सकते हैं। इसीलिये यह कांग्रेस कौन्सिल प्रवेश के विरोध में किये जाने वाले आन्दोलन को स्थगित करती है।

"साथ ही यह कांग्रेस अपने सब सभ्यों को जल्दी से जल्दी स्वराज्य प्राप्त करने के लिये महात्मा गान्धी द्वारा बताये

लिए रचनात्मक कार्यों को दुगने परिश्रम से पूरा करने के निमन्त्रित करती हूँ।"



[६]

एकता-सम्मेलन

कांग्रेस में एकता कराने के बाद आपका ध्यान देश की अन्य प्रगतियों की ओर आकृष्ट हुआ। अमृतसर में सिक्खों द्वारा छेड़े गये गुरु के बाग-आन्दोलन की धूम मच ही रही थी। आपने भी उसमें दिलचस्पी ली और नवम्बर १९२३ में अकालियों के बुलाने पर अन्य कांग्रेसी नेताओं के साथ आप अमृतसर भी गये थे। वस्तुस्थिति समझने के बाद वहां एक अकाली सहायक समिति का निर्माण किया गया, जिसके आप भी एक सदस्य चुने गये थे। वापिसी पर आप दिल्ली ठहरे और केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव में, स्वराज्य पार्टी के

उम्मीदवार के समर्थन में आपने मतदाताओं से ि
अपील की।

देश के दुर्भाग्य से, उन दिनों भारत-भर में हिन्दू मुस्लिम झगड़ों का बोलबाला था। तञ्जीम और तबलीग तथा शुद्धि और सगठन की हलचल तो थी ही; सर्कारी साम्प्रदायिकता भी अपने नंगे रूप में खुलकर खेल रही थी। मनुष्य मनुष्य की जान का भूखा था, और भाई भाई को बरबाद करने प तुला हुआ था। ऐसी भयंकर स्थिति देखकर महात्मा गांधी की आत्मा तिलमिला उठी। उस तपस्वी ने वातावरण में शान्ति लाने के सभी प्रयत्न कर डाले; किन्तु जब उद्देश्य में सफलता होती न देखी तो झट, आत्म शुद्धि के लिए दिल्ली में २१ दि का ऐतिहासिक अनशन शुरू कर दिया। सर्वत्र हलचल म गई। लोग गांधी जी की प्राण रक्षा के लिए भाग-दौड़ में पि पड़े। एकता-सम्मेलन का आयोजन किया गया और भा सभी नेता दिल्ली में आ विराजे। सितम्बर १६२४ के अन्ति सप्ताह में सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। हिन्दू और मुसलमान नेत तन ही गये एक दूसरे के सामने। आपस में खूब बहस मुबाहि वाद विवाद और विचार विमर्श हुए। कई बार तो ऐ स्थिति हो गई कि सब बना बनाया काम चौपट होता दिख दिया, लेकिन आपकी व्यवहार कुशलता, लगन और सचाई सारी बाधाओं का छिन्न-भिन्न कर दिया। उस समय आप कार्य-तत्परता देखते ही बनती थी। एकता के सच्चे दूत रूप में, लोगों ने आपका अभिनन्दन किया और आप आ

उद्देश्य में सफल हो ही गये। कलकत्ते के लाट पादरी ने इस पर कहा कि—"मौलाना आज़ाद जैसे आदमियों के ऊपर भारत का भविष्य निर्भर है।" सचमुच, सम्मेलन के बाद आप की योग्यता का सिक्का ही बैठ गया। 'अर्जुन' ने एक अग्रलेख द्वारा आपकी इस प्रकार अभ्यर्थना की थी—

"एकता सम्मेलन में से बड़ी हुई इज़्ज़त के साथ यदि कोई नेता देश के सामने आ रहे हैं, तो वह मो० अब्बुलकलाम आज़ाद हैं। यदि कान्फ्रेंस को कुछ भी सफलता प्राप्त हुई तो मौलाना आज़ाद का उस में सब से बड़ा हाथ होगा। कई ऐसे विकट समयों में मौलाना ने किश्ती को पतवार को सभाला, जिनमें से निकालना असम्भव सा दिखाई देता था। सभी लोग जानते थे कि आप एक उदार विचारों के देशभक्त हैं, परन्तु यह बहुत कम लोगों को पता था कि आपकी निर्णय करने की शक्ति, दृढ़ता और विश्वास की राशि इतनी अधिक है।

"जिस समय गो हत्या सम्बन्धी प्रस्ताव विषय-निर्धारिणी समिति में अड गया, उस समय मो० अब्बुलकलाम आज़ाद ने एक घण्टे भर की वक्तृता दी। स्पष्ट मजबूती और बुद्धिमत्ता के लिए वह वक्तृता इस कान्फ्रेंस में एक ही थी। महात्मा गांधी के सिवा ऐसी स्पष्ट घोषणा शायद ही कोई कर सकता। घोषणा में मौलाना ने बतलाया कि कई लोग समझते हैं कि भारतवर्ष में दो तरह के आदमी रहते हैं—एक वह ... की रक्षा चाहते हैं और दूसरे वह लोग, जो

गौ की कुर्बानी को धर्म समझते हैं। यह उन लोगों की है। सब मुसलमान गौ की कुर्बानी को धर्म नहीं मानते। मुसलमानों की संख्या कम नहीं है जो मानते हैं कि भारत में सुखपूर्वक रहने के लिए आवश्यक है कि हिन्दू और मुसलमान मिल कर रहें। यह इसी दशा में मिलकर रह सकते हैं जब मुसलमान लोग हिन्दुओं के धार्मिक विचारों का ख्याल रखते हुए गो-हत्या का त्याग करें। मौलाना ने बताया कि उनकी राय में हिन्दुस्तान के किसी मुसलमान को गो हत्या करनी चाहिए। यह राय है। इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए आवश्यक है कि निरन्तर गो वध को बन्द किया जाय। मसलों को इसी दृष्टि से देखना चाहिए।

"मौलाना की वक्तृता इतनी स्पष्ट, इतनी साफ और इतनी ज़बर्दस्त थी कि उसने कान्फ्रेंस के वातावरण को ही बदल दिया। जो बात पहले नामुमकिन दिखाई देती थी वह मुमकिन दिखाई देने लगी। हिन्दुओं के दिल में मुसलमानों की ओर से एक विश्वास की झलक पैदा हो गई। मुसलमानों को प्रतीत होने लगा कि एक ज़बर्दस्त शक्ति उन्हें किसी ओर खींच ले जा रही है, जिससे वह नहीं बच सकते। हमने यह एक उदाहरण बतलाया। इससे पहले समयों में भी कई बार मौ० आज़ाद के भाषण ने मुश्किल को दूर किया।

"कान्फ्रेंस ने और कोई कार्य किया या नहीं, आदमी और आदमी में भेद अवश्य बतला दिया है।

सली और नकली को जुदा जुदा करके रख दिया है। असली ने की परीक्षा आग में डालने पर होती है। जिस समय पने धर्म के लोग उल्टे प्रवाह में बहे जा रहे हों, उस समय नर्भय शब्द से उसे थाम लेना ही नेतृत्व का चिन्ह है। बहते वाह के साथ तो हरेक बह सकता है। प्रवाह को दा करना ही कठिन है। इस कार्य को सूरमा गेग ही कर सकते हैं। हमें हर्ष है कि महात्मा जी के अभाव कान्फ्रेंस को एक ऐसा सूरमा मिल गया, जिसके बिना कार्य ा सफलता पूर्वक होना असम्भव हो जाता।"

महात्मा जी ने ८ अक्टूबर को अपना उपवास समाप्त किया। दिल्ली के इतिहास में उस दिन भरत-मिलाप का दृश्य उपस्थित हुआ था। शाम को एक विराट् सार्वजनिक सभा की गई, जिसमें हिन्दू और मुसलमान प्रेम से गले मिले। आप उस समय गद्गद् हो रहे थे। अतः अपने दिल के भाव इस प्रकार प्रकट कर उठे—

"आज दिन के १२ बजे चारपाई पर दो वस्तुएं पड़ी थीं। एक ओर मुट्ठी भर देह और दूसरी ओर आत्मा। जिस प्रकार २१ दिन की भूख हड़ताल ने शरीर को कमजोर बना दिया था, उसी प्रकार आत्मा को आश्चर्यजनक शक्ति सम्पन्न भी बना दिया था।

"महात्मा जी दुनिया के विचारों से बाहर थे, किन्तु मेल मिलाप के सिवा उनके सामने और कुछ नहीं था।

...के लिए दावतें दी हैं। मत बोलने

उनके दुबले-सूखे होंठों से पहला जो शब्द निकला वह इत्तहाद (मेल) का ही निकला। हम सब लोगों में ऐसा कोई भी नहीं जो मेल मेल न पुकारता हो, किन्तु हमने असली काम के लिए क्या कुछ किया है? क्या हम केवल आरजू से जी सकते हैं? किन्तु परमात्मा को धन्यवाद है कि महात्मा जी को सफलता हुई है।

"हमको चाहिए कि हम इस देश को स्वर्ग बनायें, न कि भेड़ियों के रहने का जंगल। मेल मिलाप इस लिये न करें कि बिना इसके स्वराज्य नहीं मिल सकता, किन्तु मेल के बिना तो मजहब भी हीन होता है। यदि स्वराज्य होता तो क्या मेल की आवश्यकता न होती?

"हम में यह ताकत और हिम्मत होनी चाहिये कि हम सच्ची बात कह दें। कुछ परवाह नहीं, यदि वह सब्धा हमारे हाथ से निकल जाये, क्योंकि जिसमें गलत और बेजा घृणा है, वह देश में क्या उन्नति कर सकता है? यदि हममें ४० सच्चे हिन्दू और इतने ही सच्चे मुसलमान निकल आये तो मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि लड़ाई झगड़े का मौका फिर कभी आ ही नहीं सकता।"



[७]

दृढ़ राष्ट्रीयता

जहां तक एकता-सम्मेलन का सम्बन्ध है, वह तो ठीक प्रकार से सम्पन्न हो ही गया था; किन्तु कुछ बिगड़े दिमाग पर धर्मान्ध व्यक्ति तो यत्र-तत्र उपद्रव करते ही रहे। देश का वायुमण्डल स्वच्छ न हो सका। इस पर आपने ता० १८ अक्तूबर १९२४ को निम्नलिखित वक्तव्य प्रकाशित किया —

"कलकत्ता, इलाहाबाद और जबलपुर के दंगे, जिनकी प्रतिध्वनि दिल्ली की मिलाप कान्फ्रेंस की प्रतिध्वनि से मिल

ही खेद-जनक है। पर मैं समझता हूँ

...जम घटना है और इसके बाद से

और शान्ति का नया युग प्रारम्भ होगा। मैं सब राष्ट्रीय कार्य-कर्ताओं को यह बताना चाहता हूँ कि सगठित और सम्मिलित काम करने का यही एक अद्वितीय अवसर है। हमारे काम का प्रत्येक हिस्सा इस मिलाप कान्फ्रेंस के निश्चयों को सफल बनाने में लगना चाहिये। सब स्थानीय झगड़े चाहे वे पिछली गलतफहमियों के कारण हों और चाहे पुराने चले आते हों, वे सब मुलतवी कर देने चाहिये और दोनों पार्टियों को अपने सब हक और दावे मिलाप-कान्फ्रेंस द्वारा नियुक्त समझौता-बोर्ड के सामने पेश कर देने चाहिये। महात्मा जी के स्वस्थ हो जाने के बाद, जो कि कुछ ही दिनों की बात है, यह बोर्ड शीघ्र ही कार्य आरम्भ करेगा। इन मामलों में बोर्ड का फैसला अन्तिम फैसला होगा। कानून को अपने हाथ में करने का एकमात्र यही साधन है। आपाधापी करने से सिवाय सिर फुटव्वल के कोई लाभ नहीं होगा। मैं दोनों पार्टियों से जोरदार अपील करता हूँ कि वे समझौता बोर्ड के सामने अपने सब झगड़ों को रख कर या सर्वथा दूर करके अपने आपको इस बेहद ज़िल्लत से बचायें।"

इसके बाद भी आप दोनों जातियों में सद्भाव बनाये रखने का हर तरह से प्रयत्न करते रहे। अपनी वाणी और लेखनी की सेवा के अतिरिक्त आपने अनेक स्थानों का दौरा भी किया, किन्तु 'मर्ज बढ़ता गया ज्यों ज्यों दवा की'। देश में साम्प्रदायिकता का विष फैलता ही चला गया। यहाँ तक कि बड़े बड़े दिग्गज महारथी भी उसके चक्कर से बच न सके। मौ०

मुहम्मदअली और शौकतअली जैसे राष्ट्र-सेवक भी एक दिन पथ से विचलित हो गये और अपने अनुयायियों को राष्ट्रीय हलचलों में भाग लेने से रोकने लगे, किन्तु आपकी राष्ट्रीयता उस समय भी चट्टान की तरह दृढ़ बनी रही। आप भूल से भी कभी इधर उधर नहीं भटके तथा दोनों महान् जातियों को एक करने के प्रयत्न में दत्तचित्त रहे। आपने मुसलमानों को मसजिदों तक में खड़े हो कर यह समझाने का निरन्तर यत्न किया कि मसजिद की पवित्रता तथा नमाज के ध्यान में गाजों-बाजों से कभी खलल पैदा नहीं हो सकता।

जनवरी सन् १६२५ में आप प० मोतीलाल नेहरू के साथ नागपुर के हिन्दू-मुसलमानों में समझौता कराने के उद्देश्य से वहां गये और दो दिन के प्रयत्न के बाद फैसला करा दिया। मुसलमानों को यह बात स्वीकार करनी पड़ी कि हिन्दू जब और जिस स्थान पर चाहें बाजा बजा सकते हैं। एक सार्वजनिक सभा में भाषण देते हुए आपने वहां स्पष्ट घोषणा की थी कि "कुरान में कहीं भी यह नहीं लिखा कि मसजिदों के सामने बाजा बजाना बन्द कर दिया जाय।" इसी यात्रा में आप वर्धा भी गये थे, जहां म्यू० बोर्ड की ओर से आप लोगों को अभिनन्दन-पत्र भेंट किये गये।

बंगाल आर्डिनेन्स के लागू होने के बाद बम्बई में एक सर्वदल सम्मेलन हुआ था, जिसमें हिन्दुस्तान के विभिन्न दलों में एकता स्थापित कराने के उद्देश्य से एक स
निर्माण किया गया। आप भी उसके एक सदस्य

थे। सितम्बर सन् १९२७ में शिमला में फिर एकता-सम्मेलन किया गया। उसमें भी आपने काफ़ी भाग लिया और एक अपील भी निकाली। सन् १९२८ में जब नेहरू रिपोर्ट का निर्माण हुआ तब उसमें भी आपने खूब दिलचस्पी ली तथा २८ अगस्त को लखनऊ में हुए सर्वदल सम्मेलन में नेहरू रिपोर्ट का समर्थन करते हुए आपने कहा था कि "भारतवर्ष के सब दलों के लिए अधिक से अधिक स्वीकार करने योग्य यदि कोई रिपोर्ट हो सकती है तो यह वही नेहरू रिपोर्ट है।"

इसी बीच आप कुछ समय दिल्ली आ कर रहे और दरियागंज की एक कोठी में प्रेस आदि की व्यवस्था करके अख़बार निकालने का विचार किया, किन्तु कुछ व्यक्तिगत कारणों से आप फिर कलकत्ता चले गये और तब से वहीं 'बालू बालीगंज' मुहल्ले में स्थिर रूप से रहने लगे हैं। समय समय पर आपने देश के विभिन्न प्रान्तों का दौरा भी किया। अक्तूबर सन् १९२८ में आप सिंध गये, नवम्बर में जामिया मिल्लिया के लिये चन्दा एकत्र करने डा० अन्सारी के साथ मद्रास पहुँचे तथा मार्च १९२९ में पंजाब होते हुए पेशावर भी गये। पेशावर में खिलाफ़त कमेटी तथा कांग्रेस की ओर से की गई एक सार्वजनिक सभा में आपने भाषण देते हुए अफ़गानिस्तान के सम्बन्ध में अपनी सम्मति प्रकट की थी। आपको अंजुमन सोसाइटी की तरफ़ से रूस जाने का भी निमन्त्रण मिला था, किन्तु आप वहां जा नहीं सके।

भारत में साइमन कमीशन का बायकाट कराने का आपने

भरसक प्रयत्न किया था। १२ नवम्बर सन् १९२७ को कलकत
में खिलाफत कमेटी की ओर से, आपके ही सभापतित्व में मुस
लमानों की एक सभा हुई, जिसमें घोषित किया गया कि इस
कमीशन का बहिष्कार किया जावे, क्योंकि इससे भारत क
अपमान हुआ है। इसी सिलसिले में जनवरी सन् १९२८ में
आपने लाहौर, अमृतसर, रावलपिंडी और दिल्ली आ
शहरों का दौरा किया और सर्वत्र व्याख्यान दिये। २७ जनव
को दिल्ली की एक विराट् सार्वजनिक सभा के सभापति-पद
जनता को सम्बोधित करते हुए आपने कहा था कि "यदि त
३ फरवरी को साइमन कमीशन की आमद पर तुम शहर
राष्ट्र हित की खातिर पूरी हड़ताल भी नहीं कर सकते, तो स्व
राज्य के खयाल को ही दिल से निकाल फेंको तथा आजादी क
नाम भूल कर भी न लो।"



[८]

स्थानापन्न राष्ट्रपति

सन १९३० के आते आते देश के वायुमण्डल में नवीन उत्साह की लहर दौड़ गई। लाहौर कांग्रेस में पूर्ण स्वतन्त्रता का प्रस्ताव पास हो गया और नेता लोग असहयोग आंदोलन की तैयारी में जुट पड़े। आप भी किसी से पीछे रहने वाले थोड़े ही थे। ६ जनवरी १९३० को डा० अन्सारी के साथ आपने राष्ट्रीय मुस्लिम दल की ओर से, मुसलमानों के नाम एक मार्मिक अपील निकाली, जिसमें कहा गया कि "कांग्रेस ने अपने ध्येय में जो परिवर्तन किया है, उसके कारण यह हो गया है कि भारतीय राष्ट्र स्वय आज पांव

के भेदों को भूल कर एक हो जाय। पूर्ण स्वराज्य के लिये संघर्ष शुरू हो जाने के कारण, इनाम के बटवारे का प्रश्न पीछे पड़ गया है, क्योंकि संघर्ष के समय अधिकारों की चर्चा भी, चाहे वे कितने ही न्यायपूर्ण क्यों न हों, अप्रासंगिक हो जाती है। इसलिये लाहौर के फसले के बाद परिस्थिति चाहती है कि अधिकारों की चर्चा का स्थान स्वतन्त्रता की लड़ाई ले ले। हमें इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि मुसलमानों का मातृ भूमि के प्रति यह कर्तव्य है कि वे कांग्रेस की आवाज पर आगे बढ़ें और राष्ट्रीय संघर्ष को सफल बना कर छोड़ें।

"अब क्योंकि कांग्रेस नेहरू रिपोर्ट को त्याग कर यह ऐलान कर चुकी है कि भविष्य में वह ऐसा कोई भी शासन-विधान बनाने का यत्न न करेगी, जिससे अल्प संख्यक जातियां सन्तुष्ट न हों, इसलिये उसका उत्साह से साथ देना मुसलमानों का स्पष्ट कर्तव्य हो गया है। विशेषकर हम उन मुसलमानों से अपील करते हैं कि जिनको कांग्रेस से यह शिकायत थी कि उसने औपानवेशिक स्वराज्य के आधार पर शासन विधान तैयार किया है, वे अब आगे आयें और कांग्रेस के हाथ मज़बूत करें। मुसलमान किसी अच्छे काम में पीछे नहीं रहे। अतः अब देश की परीक्षा के अवसर पर उनका परम कर्तव्य है कि वे उसका साथ देकर स्वतन्त्र भारत के योग्य नागरिक कहलाने के दावेदार बनें।"

२१ मार्च को कांग्रेस कार्यसमिति ने युद्ध का बिगुल और ६ अप्रैल से देश भर में सत्याग्रह का प्रचण्ड

संग्राम छिड़ ही गया। आपने ३१ मार्च को बम्बई से अन्य राष्ट्रीय मुसलमानों के साथ, फिर एक वक्तव्य प्रकाशित किया, जिसके द्वारा मुसलमानों को स्वतन्त्रता-युद्ध में भाग लेने के लिये आह्वान किया। आप तो मैदान में उतर ही आये और देश के विभिन्न स्थानों में पहुंच कर भाषण तथा लेखन द्वारा आन्दोलन को बल प्रदान करने लगे। ता० १० अगस्त को सरदार पटेल गिरफ्तार हो गये और उन्होंने अपने स्थान पर आपको कांग्रेस का डिक्टेटर नियुक्त कर दिया। इस प्रकार अब आप स्थानापन्न राष्ट्रपति बन कर सारे युद्ध का सञ्चालन करने लगे। सरकार भी चौकन्नी थी। उसने आपको अधिक दिन स्वतन्त्र नहीं रहने दिया और २१ अगस्त की शाम को कलकत्ता में, पिकेटिंग आर्डिनेन्स के मातहत मेरठ में दिये गये एक भाषण पर गिरफ्तार कर लिया। २३ ता० को आप मेरठ लाये गये और जेल में बन्द कर दिये गये। आपकी गिरफ्तारी पर देश-भर में हड़ताल मनाई गई थी।

२८ अगस्त को मेरठ के ज्वाइंट मजिस्ट्रेट मि० कागाहेल की अदालत में मुकदमा पेश हुआ और आप पर छुटे आर्डिनेन्स की दफा ३ का अभियोग लगाया गया। आपने अदालत की कार्यवाही में भाग लेने से इन्कार कर दिया और मजिस्ट्रेट ने ६ महीने की सादी सजा का हुक्म सुना दिया। आपको 'ए' क्लास में रखने की भी सिफारिश की गई। सजा का हुक्म सुन कर आप प्रसन्नता के साथ विदा हुए और सन्देश मांगने पर आपने कहा कि "कैदी देश को क्या सन्देश दे सकता है?"

आपको मेरठ जेल में ही रखा गया, जहां एक बार अस्वस्थ भी हो गये थे।

इन्हीं दिनों सर सप्रू और मि० जयकर सुलह के दूत बन कर कांग्रेस और सरकार में समझौता कराने के लिये प्रयत्न शील थे। फलस्वरूप गांधी इरविन पैक्ट हुआ और २६ जनवरी १९३१ को का० कार्यसमिति के गैर कानूनी होने की आज्ञा लौटा ली गई तथा उसके सभी सदस्य छोड़ दिये गये। आप भी जेल से बाहर आये और फिर देश सेवा में लग गये।



[९]

पुनः जेल-यात्रा

सरकार से सुलह हो जाने के बाद करांची में ता० २८, २९, ३० मार्च को कांग्रेस का अधिवेशन हुआ, जिसमें म० गांधी को गोलमेज कान्फ्रेंस के लिए एकमात्र प्रतिनिधि चुन लिया गया। २९ अगस्त को महात्मा जी लन्दन के लिए विदा होगए। आपने इस शान्त वातावरण से लाभ उठाया और मुसलमानों में राष्ट्रीयता के प्रचार की ओर विशेष ध्यान दिया। ६ जुलाई बम्बई में राष्ट्रीय मुस्लिम दल की ओर से हुई एक सभा में भाषण देते हुए सम्मिलित निर्वाचन पद्धति के पक्ष में अपना मत प्रकट किया। यहां आपका तथा अन्य राष्ट्रीय

मुस्लिम नेताओं को, यूरोपियनों की ओर से, ताजमहल होटल में दावत भी दी गई। १८ जुलाई को मेरठ में होने वाले युक्त प्रान्तीय राष्ट्रीय मुस्लिम सम्मेलन में सम्मिलित हो कर, आप २६ जुलाई को काश्मीर के बलवे के सम्बन्ध में, श्रीनगर भी गये थे। अक्टूबर १९३१ में होने वाली पंजाब राष्ट्रीय मुस्लिम कान्फ्रेंस के आप सभापति चुने गये, किन्तु अस्वस्थता के कारण उसमें शामिल न हो सके।

पुरी में कांग्रेस का आगामी अधिवेशन होने वाला था। उसके सभापति पद के लिए आपका भी नाम पेश किया गया, किन्तु सन् १९३२ के आते आते, महात्मा जी गोल मेज कान्फ्रेंस से निराश वापिस लौटे, और देश में फिर से सत्याग्रह-युद्ध का सूत्रपात होने लग गया। आपने तब राष्ट्रीय मुस्लिम दल की प० कमेटी के सदस्यों के साथ एक अपील प्रकाशित की, जिसमें अपने सहधर्मियों से, कांग्रेस द्वारा आरम्भ किये गये सत्याग्रह-संग्राम में भाग लेने के लिये प्रार्थना की गई थी। अपील में कहा गया था कि "भारत की स्वतन्त्रता गोलमेज कान्फ्रेंस के मुस्लिम सदस्यों और उनके साथियों के गैर मुस्लिम और अराष्ट्रीय नेताओं से प्राप्त नहीं की जा सकती। यह तो केवल अपने सब योग्य देशवासियों के लक्ष्य को अपना लक्ष्य बनाने और त्याग तथा बलिदान के पथ पर चलने से प्राप्त हो सकती है। क्या भारत के मुसलमान अपनी पुरानी गौरवमय परम्परा को देश के [illegible] करके कलंकित करेंगे? हमें विश्वास है, कि देश की इस [illegible] में भारत के मुस्लिम पुत्र और पुत्रियां

दलितों के लिए पृथक् निर्वाचन पद्धति पर मुसलमानों के रुख के सम्बन्ध में महात्मा जी की राय को स्पष्ट करते हुए आपने बताया था कि "वास्तव में गांधी जी का यह अनुरोध है कि मुसलमान इस मामले में दखल न दें, उन्हें इधर से उदासीन ही रहना चाहिये।"

१५ जनवरी १९३४ को बिहार में प्रलयकारी भूकम्प हुआ। पीड़ितों की आह आप तक भी पहुँची। सहृदय मौलाना अब चुप कैसे रह सकते थे! जो कुछ भी बन पड़ा, आपने सहायता कार्य किया। देशवासियों के नाम पीड़ितों की मदद के लिये एक अपील भी आपने निकाली था। अण्डमान में काले पानी की सजा भुगतने वाले राजबन्दियों को वापिस बुलाने के सम्बन्ध में भी आपने अन्य नेताओं के साथ, भारत सरकार से अपील की थी।



[११]

कुरान का भाष्य

राष्ट्रीय कार्यों में फँसे रह कर आप अपने धार्मिक कृत्यों से कभी उदासीन नहीं हुए। नियमित रूप से अपनी दिनचर्या निभाते रहते हैं। लिखना-पढ़ना भी आपका निरन्तर जारी रहा है। धर्मशास्त्र और इस्लामी किताबों पर आपने कई एक ग्रन्थों की रचना की है। अपने पिता के समान आपकी भी विद्वत्ता और योग्यता की विदेशों तक में धाक है। विचार [illegible] और उदार हैं। कुरान

का भाष्य भी आपने अपनी इसी विशाल दृष्टि से किया है। उदाहरण के लिए एक उद्धरण हम यहां उद्धृत करते हैं। आपने लिखा है कि "कुरान ने न केवल उन सब धर्मों के सत्यादर्शों को सच्चा माना, जिनके मानने वाले उस समय उसके सामने मौजूद थे, बल्कि साफ़ शब्दों में कह दिया कि मुझसे पहिले जितने भी रसूल और धर्म-प्रवर्त्तक हुए हैं, मैं उन सब को सच मानता हूं और उनमें से किसी एक के न मानने को भी ईश्वरीय सत्य को न मानने से इन्कार समझता हूं। उसने किसी धर्म वाले से यह नहीं चाहा कि वह अपने धर्म को छोड़ दे। बल्कि जब कभी चाहा तो यही कि सब अपने अपने धर्मों की असली शिक्षा पर चले; क्योंकि सब धर्मों की असली शिक्षा एक ही है। न उसने कोई नया सिद्धांत पेश किया और न कोई नई कार्य-पद्धति ही चलाई। उसने सदा उन्हीं बातों पर ज़ोर दिया, जो संसार के सब धर्मों की सबसे ज़्यादा जानी बूझी बातें हैं अर्थात् एक जगदीश्वर की उपासना और सदाचार का जीवन। उसने जब कभी लोगों को अपनी ओर बुलाया है, तो यही कहा है कि अपने अपने धर्मों की वास्तविक शिक्षा को फिर से ताज़ा करलो, तुम्हारा ऐसा कर लेना ही मुझे कबूल कर लेना है।" इस प्रकार के स्वतन्त्र विचार आप सदा ही प्रकट करते रहते हैं। काबुल में मज़हब बदलने वाले लोगों को जब धार पत्थरों से मार डाला गया था, तब आपने उसको के विरुद्ध घोषित किया था। हिन्दुस्तान में

हत्याओं की भी आपने निन्दा की है। कुरान के ही अनुवाद में आपने यह भी कहा है कि "मुहम्मद साहब को यदि कोई शख्स भला-बुरा कहता है तो उसको सहन कर लेना चाहिए। ऐसे व्यक्ति को दण्ड देने का मुसलमानों को कोई अधिकार नहीं है।"

आपका किया हुआ कुरान का भाष्य इस्लामी जगत् में इस युग का अद्वितीय ग्रन्थ कहा जाता है। इसका हिन्दी अनुवाद भी प्रकाशित हो चुका है। अपनी विद्वत्ता के कारण ही आप मुसलमानों में आदर की दृष्टि से देखे जाते हैं। आपके अनुयायी चारों ओर फैले हुए हैं। कुछ लोग तो आपको इस देश का सबसे बड़ा मुसलमान समझते हैं। १२ अगस्त सन १९३६ को तो लाहौर की बादशाही मसजिद में मुसलमानों की एक विशेष सभा में, आपको 'अमीरुल्मिल्लत' (भारत के मुसलमानों का शिरोमणि) बना देने का सुझाव पेश किया गया था। कलकत्ते में सन् १९३६ की बकर ईद पर आपने, जो हज़ारों मुसलमानों को नमाज़ कराई, तथा धार्मिक उपदेश (वाज़) दिया था, वह रेडियो द्वारा सारे भारतवर्ष में ब्राडकास्ट किया गया था।

अक्टूबर १९३४ में बम्बई में कांग्रेस का अधिवेशन होकर उसमें नया विधान बन गया था। गांधी जी भी कांग्रेस की सदस्यता से पृथक हो गए थे। इस पर काफ़ी हलचल मची। उस समय आपने गान्धी जी के इस निश्चय को परिताजनक और खतरनाक बताया था। अप्रैल १९३६ में

लखनऊ कांग्रेस में, नये शासन-विधान के अन्तर्गत पद-ग्रहण करने या न करने के मामले को लेकर आपस में खूब गर्मागर्म वाद-विवाद हुआ था। आप पद-ग्रहण के पक्षपातियों में से थे।



पद-ग्रहण के बाद

लखनऊ के पश्चात् दिसम्बर, १९३६ में फैजपुर में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। यहाँ भी पद ग्रहण की समस्या हल न हो सकी, तब मार्च सन् १९३७ में दिल्ली में एक राष्ट्रीय सम्मेलन किया गया। इसमें अ० भा० कांग्रेस कमेटी के सदस्यों के अलावा कांग्रेस टिकट पर चुने गये असेम्बली और कौंसिल के भी सभी सदस्य सम्मिलित हुए थे। एक मास के वाद-विवाद के बाद, आखिरकार, १७ मार्च को नए [illegible] के अंतर्गत पद-ग्रहण [illegible]
और २१ मार्च को [illegible]

हैं और कांग्रेसी प्रान्तों में कहीं भी अत्याचार नहीं हुए। प्रकार सक्खर बांध के इलाके के नये बन्दोबस्त को लेकर सिंध-मन्त्रि मण्डल से कांग्रेस पार्टी का मतभेद हुआ। मुस्लिम लीगियों ने भाग-दौड़ करके अपनी स्वार्थ-साधना चाही, तब आपने १७ अक्तूबर १९३८ को एक लम्बा वक्तव्य निकालते हुए कहा था कि "लोग समझते हैं कि प्रभुत्व प्राप्त करने के लिये ही कांग्रेस और लीग में प्रतिद्वन्द्विता है। लीग के लिए तो यह बात ठीक है, किन्तु कांग्रेस के लिये ऐसा नहीं है। कांग्रेस तो अन्य प्रान्तों की तरह सिन्ध में भी एक प्रोग्राम और एक आदर्श के लिये खड़ी है। जो मन्त्रिमण्डल कांग्रेस के आदेश को पूरा करेगा, कांग्रेस पार्टी उसी का साथ देगी। अगर सिद्धान्त की परवाह न होती तो मज़े में कांग्रेस वर्तमान मन्त्रिमण्डल पर हावी हो सकती है।"

आपकी ऐसी ही स्पष्टोक्तियों के कारण संकीर्ण विचारों के मुसलमान बिगड़ गये और आपके विरुद्ध ईद की नमाज़ को लेकर एक आन्दोलन खड़ा कर दिया। आप इमाम की हैसियत से अनेक वर्षों से कलकत्ता में ईद की नमाज़ कराते आते थे, किन्तु नवम्बर १९३८ में कुछ मुस्लिम लीगियों ने इसका विरोध किया। मामला ईद नमाज़ कमेटी के सामने पेश हुआ और उसने आपसे ही नमाज़ कराने का निश्चय किया, लेकिन वाह री विशुद्ध धार्मिकता! उधर मौलाना आज़ाद ने घोषित किया कि "ईद जैसे पवित्र त्यौहार पर मैं मुसलमानों में फूट पड़ने देना नहीं चाहता और इसीलिये अपने इमाम पद को त्यागता

की महाशक्तियां आपस में उलझ ही पड़ीं। इस अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति का भारत की राजनीति पर प्रभाव पड़ना अवश्य-म्भावी था। अत कांग्रेस और सरकार दोनों अपने अपने प्रयत्नों मे लग गये। आपने ७ सितम्बर १६३६ को कलकत्ता से एक वक्तव्य निकाल कर भारतीय जनता से अपील की "कि अब सब को अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के कारण, आपस के सभी राजनैतिक और साम्प्रदायिक मतभेदों को भुलाकर एक हो जाना चाहिए।"

वायसराय लार्ड लिनलिथगो ने देश के विभिन्न नेताओं से मुलाकात करना शुरू किया। म० गांधी, राजेन्द्र बाबू, प० जवाहरलाल आदि से भी उनका विचार विनिमय हुआ। मगर सरकार के अल्पमत वालों की समस्या को आड़ लेने के कारण कुछ भी फैसला न हो सका और कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों ने त्यागपत्र दे दिये। आप इस सारी बातचीत के निकट सम्पर्क में रहे। नवम्बर १६३६ में दिल्ली में एक बार फिर म० गांधी, मि० जिन्ना और प० नेहरू ने आपस में मिलकर हिन्दू-मुस्लिम एकता का प्रयत्न किया, मगर इस बार भी हाथ-हाथ फिसल हुई और देश के वातावरण में अशान्ति ही बढ़ती गई। कांग्रेस ने अपनी ओर से महात्मा जी को सारे अधिकार सुपुर्द कर दिये और उन्होंने कई बार वायसराय के यहां से खाली हाथ लौट आने पर भी आशा को अपने हाथ से नहीं जाने दिया तथा रामगढ़ कांग्रेस के अवसर पर ही भावी प्रोग्राम निर्धारित करने का निश्चय किया।

रामगढ़ बिहार का एक छोटा सा ग्राम है। यहीं ता० २०, २१ और २२ मार्च सन् १९४० में कांग्रेस अधिवेशन होगा। ता० ४ फरवरी को इसके सभापति-पद के लिए नामीनेशन पेपर दाखिल हुए और आप तथा श्री एम० एन० राय मैदान में आये। लोगों ने बहुत प्रयत्न किया कि इस बार आपको निर्विरोध राष्ट्रपति चुना जाये, किन्तु राय महाशय ने अपना नामीनेशन पेपर वापिस न लेकर चुनाव लड़ने का ही निश्चय किया। ता० १५ फरवरी को नियमानुसार चुनाव हुआ और आप को १८६४ मत मिले तथा मि० एम० एन० राय को केवल १८३। इस प्रकार आप १६८१ वोटों के अत्यधिक बहुमत से राष्ट्रपति निर्वाचित घोषित कर दिये गये।

इन दिनों आप पंजाब के कांग्रेसियों में वर्षों से चली आई फूट को मिटाने के निमित्त लाहौर आये हुए थे। कई दिन की कोशिशों के बाद आप अपने मिशन में सफल हो गये, और एक पैक्ट बनाकर दोनों दलों में एकता स्थापित करा दी। इस प्रकार पंजाब में १० साल के बाद फिर नया अध्याय शुरू हुआ और लोग आपकी सेवाओं के चिर-ऋणी बन गये। यहीं आपको अपने राष्ट्रपति निर्वाचन का समाचार प्राप्त हुआ और लोगों ने आपका शानदार स्वागत किया। टाउनहाल के मैदान में आप को एक बड़ी पार्टी दी गयी। प्रधान मंत्री सर सिकन्दर सहित मंत्रि मंडल के सभी सदस्यों ने आपको बधाई दी तथा अन्य प्रमुख व्यक्तियों ने आपका अभिनंदन किया। देश के

अन्य मार्गों में भी आपके निर्वाचन पर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई तथा आप पर बधाइयों की बौछार पड़ने लगी। पंजाब के एक मुस्लिम लीगी कार्यकर्त्ता श्री सैयदअहमद अख्तरजादी ने आपको बधाई देते हुए लिखा था कि "यद्यपि राजनीति में मेरे विचार आप से भिन्न हैं, तथापि मेरा यह दृढ़ विश्वास है, कि मुसलमानों में आप ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं, जो भारतीय मुसलमानों का सच्चा प्रतिनिधित्व करते हैं। मुझे आशा है कि आप कांग्रेस व लीग में समझौता कराने में सफल हो जायेंगे।" बम्बई-सरकार के भूतपूर्व शिक्षामन्त्री और मुस्लिम लीग के संस्थापक मौलवी सर रफीअहमद ने कहा कि "मौ० आजाद का सभापति चुना जाना राजनैतिक दृष्टिकोण से बड़ा ही महत्वपूर्ण है। आप इस पद के लिए सर्वथा योग्य हैं।" पं० जवाहरलाल नेहरू ने आपका एक वक्तव्य में इस प्रकार अभिनन्दन किया कि — "मौ० आजाद असीम विद्वान और कट्टर देशभक्त हैं। उनकी योग्यता में किसी को सन्देह नहीं हो सकता। यदि वे चाहते तो पिछले कई साल पहले राष्ट्रपति हो सकते थे। उन्हें सम्मान की परवाह नहीं है। उन्होंने देश के हित के लिये ही, अपनी इच्छा के विरुद्ध, इस साल राष्ट्रपतित्व स्वीकार किया है। हम उनका एक बहादुर और आजमाये हुए सरदार की तरह इस संकटपूर्ण घड़ी में स्वागत करते हैं। इस घड़ी पर यह तकाजा है कि हम में से हरेक व्यक्ति भरसक अपना कर्त्तव्य पालन करे।"

अपने निर्वाचन पर आपने देश के नाम एक संदेश देते

हुए कहा कि — "दिन प्रति दिन हम भारी संग्राम के निकट पहुचते आ रहे हैं। अब हमारा सारा ध्यान इसी एक बात की ओर रहना चाहिये।" आपके राष्ट्रपति चुने जाने के बाद पहली बार कुछेक पत्र प्रतिनिधियों ने लाहोर में ता० १६ को आप से मुलाकात की और देश की वर्त्तमान समस्याओं पर अनेक प्रश्न किये। आपने उनका समुचित उत्तर दिया। हम उनमें से कुछेक यहा उद्धृत करते हैं। आप से पूछा गया कि आपके राष्ट्रपति काल में क्या मुख्य कार्यक्रम हिन्दू मुस्लिम प्रश्न को हल करना रहेगा? इसका उत्तर देते हुए आपने कहा कि "देश के सामने मुख्य सवाल तो राजनैतिक है, लेकिन हिन्दू मुस्लिम सवाल को भी नजरन्दाज नहीं किया जा सकता। पर मुझे यह कहने में कोई झिझक नहीं कि हमारे में जितने आन्तरिक मत भेद हैं, उनकी वजह से स्वाधीनता संग्राम को रोका नहीं जा सकता। साम्प्रदायिक सवाल हमारा घरेलू सवाल है, राजनैतिक सवाल को हल किये बगैर इस सवाल को हल नहीं किया जा सकता। कांग्रेस ने एक निश्चित कदम उठा लिया है और अब यह देर तक इन्तजार न करेगी। आज की अनिश्चित अवस्था देर तक कायम न रहेगी। रामगढ़ कांग्रेस के बाद कांग्रेस को अपना अगला कदम बढ़ाना होगा, उस कदम का रूप निश्चित ही संघर्षमय होगा।" यह पूछने पर कि क्या इसका अभिप्राय यह है कि सत्याग्रह-संग्राम फिर छिड़ जायगा? आपने उत्तर दिया कि "बेशक, क्यों नहीं?"

हिन्दू मुस्लिम सवाल को हल करने के सम्बन्ध में

होते रहेंगे।" आपने आगे कहा कि — "मुसलमान लोग यदि अपने सरक्षणों के लिये ब्रिटिश सरकार की ओर झाकेंगे तो इस से भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की जड़ें मजबूत होंगी। मैं अपने ६ करोड़ मुसलमान भाइयों से अपील करूंगा कि उन्हें अपने भाइयों को शक की निगाह से नहीं देखना चाहिये। उनके अधिकार कांग्रेस के हाथ में खतरे में नहीं हैं। मुसलमानों के लिए स्वाधीनता-सग्राम में शामिल हो जाने के अलावा और कोई विकल्प नहीं हो सकता। उन्हें कांग्रेस में आगे बढ़कर काम करना चाहिए। कांग्रेस का द्वार सब के लिए खुला है। मुसलमानों को कांग्रेस के झण्डे तले आ जाना चाहिए। कांग्रेस का द्वार सीधे रास्ते से आनेवाले लोगों के लिए खुला है, टेढ़े रास्ते से आनेवालों के लिए नहीं।"

लाहौर से आप दिल्ली आये और यहां भी स्थानीय कांग्रेसियों में फैले हुए मनोमालिन्य को दूर करने का आपने प्रयत्न किया, किन्तु कुछ कार्यकर्ताओं की अनुपस्थिति के कारण मामला सुलझ न सका और २१ फरवरी को आप कलकत्ता के लिए रवाना हो गये। २८ फरवरी को पटना में म० गांधी की उपस्थिति में, कांग्रेस कार्य समिति की बैठक हुई। आप भी इसमें सम्मिलित हुए और रामगढ़ कांग्रेस के लिए प्रस्ताव तैयार कराये। रामगढ़ में कांग्रेस की जोरशोर से तैयारियां हो रही हैं। वर्तमान राष्ट्रपति बा० राजेन्द्रप्रसाद स्वागताध्यक्ष निर्वाचित हुए हैं। वहां आपका शानदार स्वागत समारोह होगा। भगवान करे, आप अपनी सेवाओं द्वारा उस स्थान में चार चांद और लगाय, यही हमारी अभिलाषा है।

---

[१६]

परिशिष्ट

ता० १५ सितम्बर १६२३ को, दिल्ली में हुए विशेषाधिवेशन पर सभापति-पद से आपने जो भाषण दिया था, उसके कुछ अंश इस प्रकार हैं—

सामाजिक जीवन की समरूपता

संसार के इतिहास में हम देखते हैं कि मनुष्य के सामाजिक जीवन पर प्रभाव डालने वाले कई नियम हैं, जो सर्वत्र समान रूप से पाये जाते हैं। कवियों और फिलासफरों ने कई तरह से इस की निरन्तरता के नियम को